कीर्तिकौमुदी में प्रयुक्त छन्द

डॉ. अशोक कुमार सिंह...

सामेश्वरदेवकृत कीर्तिकौमुदी[1] का ऐतिहासिक महाकाव्यों में महत्त्वपूर्ण स्थान है। गुजरात के बघेल राजवंश के राणक लवण प्रसाद और वीरधवल के पुरोहित सोमेश्वरदेव और चालुक्य राजा भीमदेव के अमात्य सहोदर वस्तुपाल और तेजपाल में प्रगाढ़ मित्रता थी। वस्तुपाल के अपने प्रति सौहार्द्र, उसके अप्रतिम पराक्रम, साहित्यिक प्रतिभा तथा यश से अभिभूत सोमेश्वर ने वस्तुपाल के गुणों की प्रशस्तिरूप 'कीर्तिकौमुदी' नामक काव्य सहित कई प्रशस्तियों की रचना की। सोमेश्वरदेव उच्चकोटि के प्रतिभाशाली कवि थे, कीर्तिकौमुदी उनकी उत्कृष्ट साहित्यिक रचना है। इसमें प्रतिपाद्य तथ्यों का भी विशेष महत्त्व है, क्योंकि इसका नायक काव्य-प्रणेता का समकालीन है, चिरपरिचित है, प्रगाढ़ मित्र है। कवि और काव्यनायक के समकालीन होने से काव्य की ऐतिहासिक दृष्टि से प्रामाणिकता बढ़ जाती है।

कीर्तिकौमुदी में नौ सर्ग हैं और इसके श्लोकों की कुल संख्या ७२२ है। इसके सर्गों का नाम क्रमशः नगरवर्णन, नरेन्द्रवंश वर्णन, मन्त्रप्रतिष्ठा, दूतसमागम, युद्धवर्णन, पुरप्रमोदवर्णन, चन्द्रोदयवर्णन, परमार्थविचार और यात्रासमागमन है।

सर्गानुसार कीर्तिकौमुदी में प्रयुक्त छन्दों का लक्षणसहित विवेचन इस प्रकार है। प्रथम सर्ग नगर वर्णन में ८१ श्लोक हैं। इसमें आरंभ के ७६ श्लोकों में अनुष्टुप् छन्द प्रयुक्त हुआ है। इसके पश्चात् ७७ से ८१ श्लोकों में क्रमशः उपेन्द्रवज्रा, उपजाति, पुष्पिताग्रा, मालिनी तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द प्रयुक्त हुए हैं। इन छन्दों का लक्षण एवं कीर्तिकौमुदी के अनुसार उदाहरण निम्नवत् है –

अनुष्टुभ्[2] - श्लोके षष्ठं गुरु ज्ञेयं सर्वत्र लघु पंचमम्।
द्विचतुःपादयोर्ह्रस्वं सप्तमं दीर्घमन्ययोः।।

अर्थात् अनुष्टुप् में आठ वर्ण वाले चार चरण होते हैं। इसके अनेक प्रकार होते हैं। अनुष्टप् के प्रत्येक चरण का पाँचवाँ वर्ण लघु, और छठा गुरु होता है। प्रथम और तृतीय चरण का सातवाँ वर्ण गुरु और द्वितीय और चतुर्थ चरण का लघु होता है। शेष वर्ण या तो लघु या गुरु होते हैं।

उदाहरण[3] - श्रिये सन्तु सतामेते, चिरं चातुर्भुजा भुजाः।
यामिका इव धर्मस्य, चत्वारः स्फुरदायुधाः।।९/९
हर प्रासादसन्दोहमनोहरमिदं सरः।
राजते नगरं तच्च, राजहंसैरलकृताम्।।७६/९।।

उपेन्द्रवजा ४ (उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ) इसके प्रत्येक चरण में क्रमशः जगण, तगण और जगण के पश्चात् दो गुरु होते हैं।

उदाहरण ५ – सशंखचक्रः प्रथितप्रभुतावतारशाली कमलाभिरामः।
स एव कासारशिरोवतंसः कंसप्रहर्तुः प्रतिमां विभर्ति।।७७/९।।

उपजाति ६ - (अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः)

अर्थात् जिसमें इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा का लक्षण मिला हो, उसका नाम उपजाति छन्द है। इंद्रवज्रा छन्द का लक्षण होता है–स्यादिन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ अर्थात् जिसके प्रत्येक चरण में दो तगण, एक जगण और दो गुरु हों तो उसको इंद्रवज्रा कहते हैं।

उदाहरण ७

उपेन्द्रवज्रा	इंद्रवज्रा
न मानसे माद्यति मानसं मे	पम्पा न सम्पादयति प्रमोदम्।
इंद्रवज्रा	उपेन्द्रवज्रा
अच्छोदमच्छोदकमष्यसारं	सरोवरे राजति सिद्धभर्तुः

इस श्लोक के प्रथम और चतुर्थ चरण उपेन्द्रवज्रा में होने और द्वितीय और तृतीय चरण इंद्रवज्रा में होने से इसमें उपजाति छन्द है।

पुष्पिताग्रा[4]

अयुजि नयुगरेफतो यकारो। युजि च न जौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा।।

यदि विषम पादों में दो नगणों से परे एक रगण, एक यगण हो और सम पादों में एक नगण, दो जगण, एक रगण और अंत में एक गुरु हो तो वह छन्द पुष्पिताग्रा कहा जाता है।

जैसे[5]

प्रतितटघटितामिघातजातप्रसृमरफेनकदम्बकच्छलेन।
हरहसितसितद्युतिं स्वकार्तिं, दिशिदिशि कन्दलयत्ययं तडागः।।6।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मालिनी[१०] -

(ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः) जिसके चारों चरणों में क्रमशः नगण, नगण, मगण तथा यगण, यगण हों तथा आठ और सात अक्षरों पर यति हो, उसको मालिनी छन्द कहते हैं।

यथा[११] -

अलघुलहरिलिप्तव्योमभागे तडागे, तरलतुहिनपिण्डापाण्डुडिण्डीरदम्भात्।
तरुणतरणितापव्यापदापन्नमुच्चैरिह विहरति तारा चक्रवालंविशालं ।।८०।।

शार्दूलविक्रीडित[१२] -

सूर्याश्वैर्मसजास्ततः सगुरवः शार्दूलविक्रीडितम्[११] अर्थात् जिसमें मगण, सगण, जगण, सगण और दो तगण तथा अन्त में एक गुरु हो और बारह, सात वर्णों पर यति हो तो उस छन्द का नाम शार्दूलविक्रीडित होता है।

जैसे [१३] -

एकत्र स्फुटदब्जराजिरजसा बभ्रूकृतः सुभ्रुवां,
प्रभ्रश्यत्कुचकुम्भकुंकुमरसैरन्यत्र रक्तीकृतः।
अन्यत्र स्मितनीलनीरजलदलच्छायेन नीलीकृतः,
श्रेयः सिन्धुरवर्णकम्बलधुरां धत्ते सरःशेखरः।।8 1 ।।

द्वितीय सर्ग 'नरेन्द्रवंशवर्णन' में ११५ श्लोक हैं। इसके प्रारंभ में ८१ श्लोक अनुष्टुप् में, अठारह श्लोक (८२ से ९९) उपजाति में, तीन (१०० से १०२) इन्द्रवज्रा में, बारह (१०३-११४) वसन्ततिलका में और अंतिम ११५वाँ श्लोक मालिनी छन्द में हैं।

इस सर्ग में प्रयुक्त छन्दों में से वसन्ततिलका छन्द को छोड़कर अन्य छन्दों का लक्षण प्रथम सर्ग के विवरण के क्रम में दिया जा चुका है। इसका लक्षण एवं कीर्तिकौमुदी से इसका उदाहरण निम्नवत् है--

वसन्ततिलक[१४]

ज्ञेयं वसन्ततिलकं तभजा जगौ गः।

जिसके चारों चरणों में क्रमशः तगण, भगण, जगण और दो गुरुवर्ण हों उसको वसन्ततिलक नामक छन्द कहते हैं।

जैसे[१५] -

मुण्डेव, खण्डितनिरंतरवृक्षखण्डा,
निष्कुष्डलेव दलितोज्ज्वलवृत्तवप्रा।
दूरदपास्तविषया विधवेव दैन्यमभ्येभ्रम्येति
गूर्जरधराधिपराजधानी।।१०४/२।।

मन्त्रप्रतिष्ठा नामक तृतीय सर्ग में श्लोकों की संख्या ७९ है। इस सर्ग में प्रथम ५० श्लोक अनुष्टुभ् में निबद्ध हैं। इसके २२ श्लोक (५१ से ७३) रथोद्धता में, दो (७४-७५) शालिनी में और श्लोकसंख्या ७६ वंशस्थ में, ७७ शिखरिणी में, ७८ मालिनी में और अंतिम ७९ पुष्पिताग्रा में निबद्ध है।

ऊपर प्रयुक्त छन्दों में से अनुष्टुप्, मालिनी और पुष्पिताग्रा का परिचय दिया जा चुका है। अन्य छन्दों रथोद्धता, शालिनी, वंशस्थ और शिखरिणी का लक्षण और कीर्तिकौमुदी से उनके उदाहरण निम्नवत् हैं--

रथोद्धता[१६] -

रान्नरातिह रथोद्धता तगौ।

अर्थात् रगण, नगण, रगण, एक लघु, एक गुरु हो तो उसका नाम रथोद्धता है

उदाहरण[१७] -

यौवनेऽपि मदनान्न विक्रिया, नो धनेऽपि विनयव्यतिक्रमः।
दुर्जनेऽपि न मनागनार्जवं, केन वामिति नवाकृतिः कृता ।।६१/३।।

शालिनी[१८]

शालिन्युक्ता म्तौ तगौ गोऽब्धिलोकैः।।

अर्थात् इस छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः मगण, दो तगण और दो गुरु होते हैं। चार तथा सात वर्णों पर यति होती है।

उदाहरण[१९]

दृष्टिर्नष्टा भूपतीनां तमोभिस्ते लोभान्धान् साम्प्रतं कुर्वतेऽग्रे।
यैर्नीयन्ते वर्त्मना तेन यत्र, भ्रश्यन्त्याशु व्याकुलास्ते पिऽ तेऽपि।।७५।।३

वंशस्थ[२०] -

जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ।।

अर्थात् वंशस्थ के चारों चरणों में से प्रत्येक में जगण, तगण, रजगण और रगण होते हैं।

उदाहरण[२१]

न सर्वथा कश्चन् लोभवर्जितः
करोति सेवामनुवासरं विभोः।
तथापि कार्यः स तथा मनीषिभिः
परत्र बाधा न यथाऽत्र वाच्यता।।७६/३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शिखरिणी[२२]

रसै रुद्रैश्छिन्ना यमनसभलागः शिखरिणी

अर्थात् जिसमें यगण, मगण, नगण, सगण, भगण, अंत में क्रमशः एक लघु और एक गुरु हो तो उस छन्द को शिखरिणी कहते हैं।

उदाहरण[२३] -

पुरस्कृत्य न्यायं खलजनमनादृत्य सहजा
नरीन्निर्जित्य श्रीपतिचरितमाश्रित्य च यदि।
समुद्धर्तुं धात्रीमभिलषसि तत् सैष शिरसा,
धृतो देवादेशः स्फुटमपरथा स्वस्ति भवते ।।७७/३।।

चतुर्थ सर्ग 'दूतसभागम' में ९१ श्लोक हैं, जिनमें से प्रथम ४१ श्लोक अनुष्टुप् में ४७ श्लोक (४२ से ८८) वसन्तमालिनी या उपपूर्वा में, श्लोक संख्या ८९ वसन्ततिलका में, ९० शार्दूल विक्रीडित में और ९१ पुष्पिताग्रा में निबद्ध है।

प्रसरत्यथ मत्सरप्रबन्धे, द्रुतमेकेन रणोल्वणं कृपाण्।
अपरेण सुतं करेण वीरं, सहसा संयति यान्तमेष दध्रे।।५४/४
जगति ज्वलिताखिलप्रदेशः, प्रचुरीभूतमलिम्लुचप्रचारः।
स परस्परविग्रहो ग्रहणमिव तेषामभवन्नरेश्वराणाम्।।६१/४।।

'युद्धवर्णन' नामक पाँचवें सर्ग में ६८ श्लोक हैं। इनमें एक से ६२ श्लोक तक अनुष्टुप् में, ६३ से ६७ श्लोक तक वसन्ततिलका में तथा अंतिम ६वाँश्लोक हरिणी छन्द में रचित है। इस सर्ग में, प्रयुक्त नए छन्द हरिणी का लक्षण एवं कीर्तिकौमुदी का उक्त श्लोक निम्नलिखित है--

हरिणी[२४] -

रसयुगहयैर्न्सौ म्रौ स्लौ गो यदा हरिणी तदा।

अर्थात् जिसमें नगण, सगण, मगण, रगण, सगण एक लघु और गुरु हो तो उस छन्द का नाम हरिणी होता है।

उदाहरण[२५]

प्रतिनृपतिभिर्भगनोत्साहैर्निमग्नमिव क्वचित्
स च नरपतिर्वीरस्तीरं जगाम मृधाम्बुधेः
दिशि दिशि यशःस्तोमान् सोमान्वयी समचारय
च्चतुरकुरलीचाणक्योऽयं प्रियंकरणैर्गुणैः।।६८/५

पुरप्रमोद-वर्णन, शीर्षक छठे सर्ग में ५६ श्लोक हैं। इस सर्ग में काव्य के प्रधान छन्द अनुष्टुप् में कोई भी श्लोक निबद्ध नहीं है। संभवतः साहित्यदर्पणकार आचार्य विश्वनाथ के इस मत के अनुरूप कि कोई सर्ग विविध वृत्तों से युक्त होना चाहिए अर्थात् प्रधान छन्द से पृथक् छन्द में निबद्ध होना चाहिए।[२६] सोमश्वर देव ने इसमें अनुष्टुप् का प्रयोग नहीं किया है। इस सर्ग में प्रथम ५५ श्लोक उपजाति में और अंतिम ५वाँ श्लोक प्रहर्षिणी में निबद्ध है। प्रहर्षिणी का लक्षण[२७] एवं उदाहरण[२८] इस प्रकार है-

म्नौ ग्रौगस्त्रिदशयतिः प्रहर्षिणीयम्।।

प्रहर्षिणी के प्रत्येक चरण में क्रमशः मगण, नगण, जगण, रगण और एक गुरु होता है।

आशायामशिशिरधाम्नि पश्चिमाया-
मायाते सुकृतवतामपश्चिमोऽसौ।
तान् कृत्वा धनकनकैः कवीन् कृतार्था -
नावासं स्वमभिचचाल वस्तुपालः।।56/6।।

चन्द्रोदयवर्णन नामक सप्तम सर्ग में ८३ श्लोक है, जिसमें प्रारंभ के ५३ श्लोक अनुष्टुप् में है। ५४ से ५६ और ५९ से ७२ उपजाति में, ५७, ५८ इंद्रवज्रा में तथा ७६, ८० एवं ८१ पुष्पिताग्रा में रचित हैं। ८२, ८३ शार्दूलविक्रीडित छन्द में, ७३ वसन्ततिलक में, ७८ प्रहर्षिणी में तथा ७४ और ७९ द्रुतविलम्बित छन्द में रचित हैं।

इस ग्रन्थ में द्रुतविलम्बित छन्द का प्रयोग सातवें सर्ग में ही पहली बार हुआ है, इसका लक्षण एवं उदाहरण इस प्रकार है-

लक्षण[२९] -

द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ

अर्थात् जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः नगण, भगण, पुनः भगण और अंत में एक रगण हो तो उसको द्रुतविलम्बित कहते हैं।

उदाहरण[३०] -

निगदितुं विधिनापि न शक्यते,
सुभटता कुचयोः कुटिलभ्रुवाम्
सुरतसंयति यौ प्रियपीडिता-
वपि नतिं नगतौ च्युतकंचुकौ ।।७९/७।।

आठवें परमार्थविचार नामक सर्ग में ७१ श्लोक हैं। इस सर्ग के आरंभिक ५६ श्लोक अनुष्टुप् छन्द में हैं। आठवें सर्ग के शेष श्लोकों में से बारह (५७-६८) पुष्पिताग्रा में श्लोक ६९ वाँ शालिनी में, ७०वाँ प्रहर्षिणी में और अंतिम ७१वाँ शार्दूलविक्रीडित छन्द में रचित है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कीर्तिकौमुदी के नौवें एवं अंतिम सर्ग में ७८ श्लोक हैं। इसमें भी प्रस्तुत काव्य के प्रधान छन्द हैं अनुष्टुप् का प्रयोग नहीं हुआ है अपितु इसमें अधिकांश श्लोक उपजाति में निबद्ध हैं। उपजाति से भिन्न आठ श्लोक (संख्या २, ४, १५, २०, २४, ४३, ४५ एवं ६५ इंद्रवज्रा में तथा ७४ से ७६ वसन्ततिलका में और ग्रन्थ के अंतिम दो श्लोक शार्दूलविक्रीडित छन्द में निबद्ध हैं।

इस प्रकार छन्द की दृष्टि से कीर्तिकौमुदी का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि इसमें सर्वाधिक श्लोक अनुष्टुप् में प्रणीत हैं। संख्या की दृष्टि से अनुष्टुप् के उपरांत कवि के प्रिय छन्द रहे हैं उपजाति और वसन्ततिलका।

अनुष्टुप् छन्द का अधिक प्रयोग इस तथ्य की ओर इंगित करता है कि सोमेश्वर देव ने इसे महाकाव्य का रूप देना चाहा है।

महाकाव्य के लक्षण के रूप में प्रदत्त कविराज विश्वनाथ के निम्न दो श्लोक प्रासंगिक हैं –

एकवृत्तमयैः पद्यैरवसानेऽन्यवृत्तकैः।
नातिस्वल्पा नातिदीर्घाः सर्गा अष्टाधिका इह।।६/३२०।।
नानावृत्तमयः क्वापि सर्गः कश्चन् दृश्यते।
सर्गान्ते भाविसर्गस्य कथायाः सूचनं भवेत्।।६/३२१।।

उपर्युक्त लक्षणों के अनुसार महाकाव्य की रचना प्रायः एक छन्द में होती है। सर्ग के अंत में भिन्न छन्द प्रयुक्त होते हैं। साथ ही कोई सर्ग ऐसा भी होता है जिसमें प्रधान छन्द से भिन्न विविध छन्दों का प्रयोग रहता है। ऐसे सर्गविशेष में प्रधान छन्द के प्रयोग का अभाव रहता है। इस कसौटी पर कीर्तिकौमुदी के छठे और नौवें सर्ग खरे उतरते हैं। इन दोनों सर्गों में अनुष्टुप् का प्रयोग नहीं हुआ है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि सोमेश्वर देव ने कीर्तिकौमुदी में छन्दों का प्रयोग एक निश्चित योजना के अनुसार किया है और वे इसमें सफल रहे हैं।

सन्दर्भ

१. सोमेश्वर देव, कीर्तिकौमुदी, सम्पा. मुनि पुण्यविजयजी, सिंधी जैनग्रंथमाला ३२, भारतीय विद्याभवन, बंबई, १९६१
२. जी.के. भट्ट, आन मीटर्स एण्ड फिगर्स आव स्पीच, महाजन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, १९५३, पृ. ६
३. कीर्तिकौमुदी, सिंधी, पृष्ठ ३
४. केदार भट्ट, वृत्तरत्नाकर, सं. नृसिंह देव शास्त्री, मेहरचंद लछमन दास, दिल्ली – ६, १९७१, पृष्ठ ६१
५. कीर्तिकौमुदी, सिंधी, पृष्ठ ६
६. वृत्तरत्नाकर शास्त्री, पृष्ठ ६२
७. कीर्तिकौमुदी, सिंधी पृष्ठ ६
८. वृत्तरत्नाकर, शास्त्री, पृष्ठ १२२
९. कीर्तिकौमुदी, सिंधी, पृष्ठ ६
१०. वृत्तरत्नाकर, शास्त्री, पृष्ठ ८६
११. कीर्तिकौमुदी, सिंधी, पृष्ठ ६
१२. वृत्तरत्नाकर, शास्त्री, पृष्ठ १०६
१३. कीर्तिकौमुदी, सिंधी, पृष्ठ ६
१४. वृत्तरत्नाकर, शास्त्री, पृष्ठ ९२
१५. कीर्तिकौमुदी, सिंधी, पृष्ठ ११
१६. वृत्तरत्नाकर, शास्त्री, पृष्ठ ६७
१७. कीर्तिकौमुदी, सिंधी, पृष्ठ १५
१८. वृत्तरत्नाकर, शास्त्री, पृष्ठ ६६
१९. कीर्तिकौमुदी, सिंधी, पृष्ठ १६
२०. वृत्तरत्नाकर, शास्त्री, पृष्ठ ७३
२१. कीर्तिकौमुदी, सिंधी, पृष्ठ १६
२२. वृत्तरत्नार, शास्त्री, पृष्ठ ९९
२३. कीर्तिकौमुदी, सिंधी, पृष्ठ १६
२४. वृत्तरत्नाकर, शास्त्री, पृष्ठ १०२
२५. कीर्तिकौमुदी, सिंधी, पृष्ठ २५
२६. कविराज विश्वनाथ, साहित्यदर्पण, पाण्डुरंग जावजी निर्णयसागर प्रेस, बंबई १९३६, पृष्ठ ३७२
२७. वृत्तरत्नाकर, शास्त्री, पृष्ठ ८८
२८. कीर्तिकौमुदी, सिंधी, पृष्ठ२९
२९. वृत्तरत्नाकर, शास्त्री, पृष्ठ ७५
३०. कीर्तिकौमुदी, सिंधी, पृष्ठ ३३
३१. साहित्यदर्पण, पाण्डुरंग, पृष्ठ ३७२–३७३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org